"भागते भूत की लंगोट सही"

डॉ. संगीता शर्मा 'अधिकारी'
भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, नई दिल्ली।

सुकृति को इस संगठन में कार्यभार ग्रहण किए अभी कुल लगभग एक महीना ही हुआ है लेकिन अभी से उसके माथे पर बल और त्योरियां चढ़ने लगीं। वो हर समय ये कहते नहीं थकती "क्या सिस्टम है इस कार्यलय का, न तो अभी तक मुझे एंप्लॉय नंबर जनरेट किया गया है और ना ही मेरी बायोमैट्रिक अटेंडेंस ही शुरू हुई है। सुदूर कोलकाता से आकर यहां बैठी हूं इन हालातों में क्वार्टर अलॉटमैंट को तो मैं केवल एक सपना ही समझूं। अगर यही हालात इस ऑफिस के रहते हैं तो मुझे नहीं लगता कि मुझे जल्दी से गवर्नमेंट एकोमोडेशन भी मिल पाएगा। फिर क्या फर्क पड़ता है ऑफिस को कि मैं अविवाहित हूं, अकेली हूं, दूर देश–गांव से रोजी–रोटी के लिए इस माहनगर में आई हूं। ये सब तो छोड़िए मुझे आए इतने दिन हो गए हैं यहां, अभी तक मुझे कंप्यूटर भी नहीं दिया गया... मैं काम कैसे करूं ??? किस पर करूं ??? बिना कंप्यूटर के काम करना तो बहुत ही मुश्किल है ..... यहां तक कि बैठने के लिए चेयर–टेबल तक मिलने में कितने ही दिन लग गए.... !!!!"

रोज–रोज सुकृति के इन सब तानों को सुन–सुनकर वरिष्ठ निशि मैडम को अनायस अपने जीवन के बेहद महत्वपूर्ण 20 वर्ष याद आने लगे जो उन्होंने ऑर्गेनाइजेशन में जॉइन करने से लेकर आज तक इस ऑर्गेनाइजेशन को अपने अथक परिश्रम से दिए, बदले में आर्गेनाइजेशन ने उनको क्या दिया.... ये सब दरकिनार करते हुए। लेकिन आज एक नवयुवती के कार्यभार ग्रहण करने के बाद उसके मुखारविंद से संगठन की स्तुति में उच्चरित इन शब्दों को सुनकर तो मानो निशि मैडम के तन–बदन में आग लग गई हो। उनकी छटपटाहट का कोई ठौर–ठिकाना न रहा। वह सोचने लगी कि हम भी कभी नौकरी में आए थे पर हमारे मन में तो कभी इतनी सारी आकांक्षाएं–अभिलाषाएं न थी। थी, तो केवल देने की भावना। कितना कुछ पा लेना, ये सब तो कभी हमने सोचा ही नहीं। और नए बच्चे आते ही "क्या–क्या इस संगठन से हमें मिलेगा ??? "सब कुछ मात्र चंद मिनटों–सेकंड़ों में जान लेना चाहते हैं। "यूनिफॉर्म मिलती है क्या यहां!!! और मिलती है तो उसकी सिलाई कितनी देते हैं? क्या वाहन भत्ता, टेलीफोन भत्ता, एंटरटेनमेंट एलाउंस, न्यूजपेपर, मैगजीन, यह सब भी हमें दिए जाते हैं क्या? चिकित्सा भत्ता कितना मिलता है मैडम? और यात्रा भत्ता!!! "ब्ला ब्ला ब्ला...

यात्राओं के लिए तो साल में एक बार तो हमें यात्रा भत्ता मिलता ही होगा, महकमा जो ऐसा ठहरा!! अब निशि मैडम क्या बताएं कि जब से वो भर्ती हुई हैं इस कार्यालय में, तब से लेकर अब तक जिनसे भी उनका परिचय हुआ है उसका प्रथम वाक्य यही होता है "अरे आपको तो फिर, टिकट–विकेट सब फ्री रहता होगा। जहां चाहे घूमकर आइए सब खर्चा कार्यालय वहन करता होगा। "अब उन्हें क्या बताएं की वास्तविकता क्या है... जैसे तब से लेकर अब तक निशि अपने उन शुभचिंतकों को यह नहीं बता सकी कि भैया "चिराग तले अंधेरा और ऊंची दुकान फीके पकवान हैं यहां" तो अभी जुम्मा–जुम्मा जिस लड़की को आए हुए चार दिन भी नहीं हुए क्या बताती क्या समझाती उसे। केवल मन मसोसकर छटपटाती रही और अपने उन दिनों को याद करने लगी कि जब कितने कष्टों से वो काम किया करते थे। वो दिन जब कॉपी पेस्ट का जमाना नहीं था। एक बार की जरा सी गलती के लिए पूरे का पूरा वाक्य, पूरे के पूरे पृष्ट बदलने पड़ जाया करते थे। स्टेंसिल की कर्णभेदी आवाज में दफ्तर का सारा समय काम करते हुए बीत जाता था। अब इतनी सुविधाएं होने पर भी सुविधाओं की प्राप्ति का अभाव है!!! ये भी एक संकट है।

और तो और भीषण गर्मी में 50 डिग्री पर पहुंचते हुए तापमान में जीवन यापन करने को अभिशप्त हम दफ्तर के बंधुआ मजदूर प्रशासनिक व्यवस्था के अंतर्गत कितना पत्र–व्यवहार और व्यक्तिगत अनुरोध कर चुके लेकिन मजाल है कि एयर कंडीशन लगा दें हमारे कमरे में। जबकि बड़े अफसरों के कमरे उसी ए.सी. की ठंडक से भीषण गर्मी में भी ठिठुरन पैदा करते रहे लेकिन नहीं दिया तो नहीं दिया हमें ऐसी बल्कि अनुरोध करने पर ये और कहा गया "मैडम जी आपके घर का कोई पर्सनल काम हो तो बताइए तुरंत हो जाएगा लेकिन प्रशासनिक व्यवस्थाएं तो आप हमसे बेहतर जानती ही हैं कि यहां आदमी मरता मर जाए पर उसे वक्त पर चीज़ न मिल पाए।" और हम ठहरे सौभाग्यशाली। तो हम तक तो हमारी इच्छित वस्तु आनी ही थी मरने से पहले। फ़िर क्या फर्क पड़ता है कि वो महीना दिसंबर का था, अगले सीजन में भी तो आएगी न ठंडी तब काम आ जाएगा भई।

सुकृति बनना तो आई.ए.एस. ऑफिसर चाहती थी लेकिन बन गई क्लर्क। भागते भूत की लंगोट सही। माँ–पापा ने भी यही समझाया उसे, भरी थाली को लात नहीं मारते। किसी तरह सरकारी नौकरी तो मिली लपक लो पहले इसे। फिर क्या फर्क पड़ता है कि आपको उस सीट का, उस पद से संबंधित काम आता भी है या नहीं। और सरकारी नौकरी में तो वैसे भी करते–करते ही काम आ जाता है। बड़े यहां किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। कुछ गलत करो, कुछ सही, ऐसे ही तो सीख जाते हैं सब सरकारी दफ्तरों में काम करना। वैसे तो सुकृति के इस कार्यालय में ज्वाइन करने से पहले ही एम.एन.सी., किसी मल्टीनेशनल कंपनी में भी काम करने के बड़े–बड़े ख्वाब थे। और उन ख्वाबों में ही उसने सोचा कि इस कार्यालय में होगा उनका निजी एयर कंडीशन केबिन। टेबल पर आईएसडी–एसटीडी फोन, फैक्स–प्रिंटर–स्केनर, सभी साजो–सामान उपलब्ध होंगे लेकिन भर्ती होने पर जब एक महीने बाद उन्हें टेबल–चेयर मिली तो उसके सारे सपने वहीं ध्वस्त हो गए। और सोचने लगी "हे राम केबिन और स्केनर आदि की तो बात ही छोड़ दें मुझे तो बैठने के लिए कुर्सी और टेबल जुटाने में ही एक माह का समय लग गया" वाह रे प्रशासन, वाह रे चरमराती–प्रशासनिक व्यवस्थाएं। और अब कंप्यूटर, किसी तरह कंप्यूटर मिल जाने का एक बड़ा सुनहरा ख्वाब लिए वह जी रही हैं। अपनी ही दुनियां में अनजानी सी।

आज भी निशी मैडम ने उसे समझाया "इतने बड़े–बड़े सपने मत सजाओ जिन्हें पूरा न किया जा सके। सपनों के टूटने पर दुख बहुत होता है। जो कुछ मिल जाए इस सरकारी महकमे में उसे सर माथे लीजिए और जो न मिले उस पर पछतावा तो बिल्कुल न कीजिए और एक सूत्र वाक्य हमेशा अपने पल्लू में गांठ बांध के रखिए–जाहि विधि रखे राम, ताहि विधि रहिए और हो सके तो केवल राम नाम भजिए।" अब मैडम निशि का 20 वर्ष का वृहत अनुभव एक–एक घटना के रूप में सुकृति के साथ साझा होने लगा उन्होंने बताया कि कैसे उनको कार्यालय में कार्यभार ग्रहण करने के लगभग एक डेढ़ साल के बाद कंप्यूटर दिया गया। वो भी जर्जर अवस्था में, जो कब जीवंत से सुसुप्त अवस्था में जा पहुंचे इसके कयास लगाना भी भगीरथ प्रयत्न है। काम करते–करते, बिना काम सेव किए अचानक से कंप्यूटर का बंद हो जाना तो जैसे उसका डेली रूटीन हो। और निशि मैडम बेहद भावुक होकर बोली– "फिर भी मैंने कभी हिम्मत नहीं हारी सुकृति और कंप्यूटर के साथ के संग और बिना साथ के भी जितना संभव होता मैं काम करके अपने वरिष्ठ अधिकारियों को देती रही। इसलिए आप मन में जरा भी ये भाव मत लाओ कि क्या मिला, क्या नहीं मिला, कब तक मिलेगा आदि–इत्यादि। मिल जाए तो खुश रहिए, न मिले तो राम–नाम भजिए और निशि मैडम ये कह तो नहीं पाई लेकिन मन ही मन ये सोचती रही कि हमारी युवा पीढ़ी "भागते भूत की लंगोट सही" सूक्ति को चरितार्थ न करते हुए अपनी रूचि के कार्य में ही कठिन परिश्रम के बल पर आगे बढ़े और अपने साथ–साथ अपने संगठन को भी नित–नूतन ऊचाइयों की ओर ले जाएं।